गोविभा

गोविज्ञान भारती का
संदेशवाहक मासिक

वर्ष : 10 ● अंक : 8 | सम्पादक : नरेन्द्र दुबे, डॉ. पुष्पेन्द्र दुबे 20 नवम्बर, 2012

शुचिता की आवश्यकता

- विनोबा

आजकल जिसे स्वच्छता कहते हैं, उसे पहले 'शुचिता' कहा जाता था। हमारी संस्कृति में उसका बहुत ही व्यापक अर्थ है। 'अर्थ-शुचित' यानी अपनी आजीविका गलत रास्ते से न चलायी जाय। शुचिता में ब्रह्मचर्यादि साधना भी आती है। पारस्परिक व्यवहार कैसा हो, मानसिक मल या विकार न हो, ये सारी बातें खास करके 'योगसूत्र' में आती हैं। उसमें शुचित्व पर एक सुंदर व्याख्यान ही है। अगर हम शुचिता की उपासना करते हैं तो उसके क्या-क्या परिणाम निकलते हैं ? उसमें सात परिणाम बताये गये हैं। एक सूत्र में दो परिणाम जरा स्थूल बताये गये हैं। दूसरे सूत्र में पांच सूक्ष्म परिणाम बताये गये हैं। पहला नतीजा है 'शौचात स्वांग जुगुप्सा' - शौच के कारण अपने देह की रुचि कम होगी। सूत्रकार पतंजलि का शब्द-प्रयोग बहुत सूक्ष्म है, क्योंकि वह बारीकी से सोचता है। क्या हम स्वच्छ हैं कि दूसरे से घृणा करें ? पतंजलि कहते हैं, अपनी देह के प्रति अरुचि पैदा होती है। दांत, नाक, कान, आंख आदि साफ करने पड़ते हैं। मल-मूत्र विसर्जन होता है। रोज नहाना पड़ता है। फिर भी शरीर रोज गंदा होता ही है। बीमारी में तो और ज्याद गंदा होता है। तब तो वह 'अशुचिव्रत:' ही दीखता है। मैंने एक सूत्र बनाया है : 'प्रभाते मलदर्शनम्'। इससे आरोग्य, वैराग्य और ऐश्वर्य सधता है। हम क्या-क्या खाते हैं, उसके क्या-क्या गंदे परिणाम निकलते हैं, यह समझ में आता है। अगर श्रीखंड-पूड़ी खूब खाते हैं, तो परिणाम गंदा आयेगा। घी, रोटी, तरकारी खाते हैं तो मल में बदबू कम रहेगी। यह जब ध्यान में आयेगा, तो मनुष्य आहार-विहार में संयम रखेगा। अगर कम्पोस्ट खाद बनायेगा, तो उससे ऐश्वर्य सधेगा। इस तरह पहला परिणाम आरोग्य सधेगा, ऐश्वर्य बढ़ेगा और संचित मल का समयोचित उपयोग किया गया, सुव्यवस्थित ढंग से खाद बनी, तो लक्ष्मी पैदा होगी और वैराग्य आयेगा। 'स्वांग जुगुप्सा' को शास्त्रीय भाषा में वैराग्य कहते हैं। इस तरह 'प्रभाते मलदर्शनम्' इस एक सूत्र से 'आरोग्यम्, ऐश्वर्यम्, वैराग्यम्' ये तीन सिद्धियां प्राप्त होंगी।

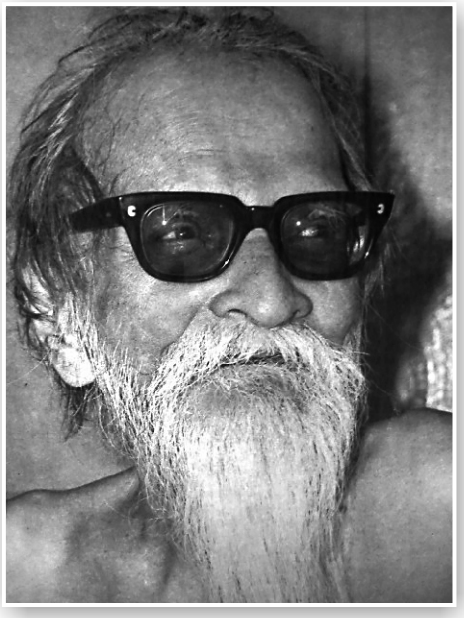

अन्दर स्वच्छता हो, तो बाहर प्रसन्नता दीखेगी

वैराग्य की बात स्वांग जुगुप्सा में आती है। शरीर के प्रति अत्यंत आसक्ति होती है। मैंने ऐसे महारोगी और कुष्ठरोगी देखे हैं, जिनका जीवन असह्य हो गया है, जिनके शरीर की बदबू दूर तक फैलती है। फिर भी वे जीना ही चाहते हैं। क्योंकि उनमें शुचिता की भावना नहीं होती। शुचित्व की भावना होती, तो शरीर के प्रति अरुचि पैदा होती और आसिक्त ढीली पड़ती। इसलिए स्वच्छता की, शुचिता की उपासना का पहला परिणाम यह होना चाहिए कि मनुष्य के हृदय में देह के प्रति अरुचि पैदा हो। इन दिनों देह को बहुत सजाया-संवारा जाता है। चेहरे पर, गालों पर न जाने कैसी-कैसी चीजें लगायी जाती हैं! मैं तो उनके नाम तक नहीं जानता। अगर भीतर स्वच्छता हो, तो बाहर प्रसन्नता दीखेगी। इससे चेहरा बहुत आकर्षक दिखाई देगा। लेकिन चेहरों पर रंग लगाने से जो चमक दीखती है, वह तो सिर्फ लोगों को दीखती है, आपके अपने काम की नहीं होती। क्योंकि आपकी आंखें तो उसे नहीं देख सकतीं। हम भीतर और बाहर से प्रसन्न हों, तो हमें अनुभव भी अच्छा आयेगा। देह की सजावट का आनंद हमारी समझ में नहीं आता।

इन्दौर, 31-7-1960

सम्पादकीय

समग्र स्वावलंबन की सिद्धि

महाराष्ट्र के बाद अब पंजाब से समाचार आ रहे हैं कि वहां के किसान आत्महत्या कर रहे हैं। पूरे देश को जिस राज्य से वर्षों प्रेरणा मिलती रही है, उस राज्य से किसानों की आत्महत्या की खबरें आना इस देश की कृषि नीतियों पर बडा प्रश्नचिह्न लगाती है। यह खबर तो पुरानी जो चुकी है कि पंजाब के गांवों की कृषि भूमि रासायनिक खादों के अत्यधिक उपयोग के कारण बंजर हो गई है। पता नहीं इस देश के नीति नियंताओं को कृषि नीति में आमूल चूल परिवर्तन करने का विचार कब आयेगा।

अपने संपादकीय में हमने इस बात को रेखांकित किया था कि विगत पचास वर्षों से इस बात के प्रयास किए जा रहे हैं कि पचास प्रतिशत किसानों को खेती से अलग कर दिया जाए। विगत दिनों जब एक भाषण स्पर्धा में निर्णायक बनने का अवसर मिला तो वहां बारहवीं कक्षा की विद्यार्थी ने इस बात को पुनः दोहराया कि इस देश के पचास प्रतिशत किसानों को खेती से अलग कर दिया जाए और उन्हें वैकल्पिक रोजगार उपलब्ध कराए जाएं। ये वैकल्पिक रोजगार बहुराष्ट्रीय कंपनियां देंगी।

इन दिनों देश की विभिन्न राज्य सरकारें विश्व पूंजी को अपने यहां आकर्षित करने के लिए विशेष प्रकार के सम्मेलन आयोजित कर रही हैं। वे उनके लिए पलक पांवडे बिछाए बैठी हैं। उनके लिए वे सारी सुविधाएं मुहैया करायी जा रही हैं, जिससे कि पूंजी का अनवरत प्रवाह उनके राज्य में आ सके। उद्योगपतियों के पक्ष में खडी सरकारें किसानों से औने-पौने दामें में जमीन खरीद कर उन्हें बेदखल करने का उपक्रम कर रही हैं। आज उत्तम खेती मध्यम व्यापार को सूत्र को बदलकर उत्तम व्यापार निकृष्ट खेती कर दिया गया है। अनेकानेक कारणों से विगत दस वर्षों में करीब दो करोड़ किसान खेती करना छोड चुके हैं। पूंजी के बढते प्रभाव ने श्रम की प्रतिष्ठा को पूरी तरह रसातल में पहुंचा दिया है। आज जितना सम्मान एक उद्योगपति, एक नौकरशाह को दिया जा रहा है उतना इस देश के अन्नदाता को नहीं। वह खेतों में फसल लगा रहा है, परंतु उसे उसका भाव तय करने का अधिकार नहीं है। बहुराष्ट्रीय कंपनियों के चंगुल में फंसी हमारी सरकार स्थानीय संसाधनों से पैदावार बढ़ाने की बात नहीं कर रही है। खेती की लागत को जितनी अच्छी तरह से किसान जानता है, उतना और कोई नहीं। जब उसके द्वारा उत्पादित माल का तथाकथित समर्थन मूल्य राज्य अथवा केंद्र सरकार तय करती है तो यह कहां तक जायज माना जा सकता है। ऐसे में यदि किसान खेती छोड़ने पर मजबूर हो रहे हैं तो इसमें क्या आश्चर्य है।

जहां तक पशुधन की बात है आज की खेती में पशु को बेदखल करने के लिए नित नयी नीतियां बनायी जा रही हैं। एक तरफ पशुधन की उर्जा का समुचित दोहन करने की बातें कहीं जाती हैं, तो दूसरी ओर ट्रैक्टर की खेती को बढ़ावा देने के लिए नयी योजनाएं लायी जाती हैं।

आज विज्ञान युग में टेक्नलॉजी का उपयोग करते हुए गांवों को ही तय करना होगा कि उनके गांव की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति किस प्रकार होगी। उसे अन्न स्वावलंबन, वस्त्र स्वावलंबन, आवास स्वावलंबन, शिक्षा स्वावलंबन, रोजगार स्वावलंबन, मनोरंजन स्वावलंबन और काम के औजारों में स्वावलंबन साधना ही होगा। इतना साध लेने के बाद इस देश की सरकार अथवा विदेशी सरकारों का असर गांवों पर होने वाला नहीं है। यदि ऐसा कहा जा रहा है कि पूंजीवाद भारत में अपना अस्तित्व बचाने के लिए अंतिम प्रयास कर रहा है तो वह फलीभूत तब होगा जब इस देश के छः लाख गांव और सत्तर प्रतिशत जनता स्वावलंबन की दिशा में अग्रसर होगी। मुक्त बाजार के सामने अब कोई हथियार काम में आने वाले नहीं है। केवल इसे बाजार मुक्ति के अस्त्र से ही पराजित किया जा सकता है। अन्न देवता की रक्षा के लिए अब कोई देवदूत आकाश से नहीं आने वाला है। स्वावलंबन के रूप में गांवों के गोवर्धन को उठा लेने में ही देश और दुनिया की भलाई है।

सभी पाठकों को दीपावली की हार्दिक शुभकामनाएं।

इस अंक में ...

- नई तालीम और भविष्य का समाज
- गाँधी, विनोबा और राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ
- प्रेरक कहानियाँ
- सम्पत्ति का बंटवारा
- जमनालाल बजाज पुरस्कारों की घोषणा।

नई तालीम और भविष्य का समाज

नई तालीम को 75 वर्ष पूर्ण हुए हैं। श्री शिवदत्तजी द्वारा लिखित पुस्तक के संपादित अंश यहाँ दिए जा रहे हैं

– डॉ.पुष्पेंद्र दुबे

शिक्षा के प्रश्न पर तुरंत ध्यान देना आवश्यक हो गया है। आज देश में यदि किसी एक पद्धति के लिए सर्वाधिक असंतोष है तो वह वर्तमान शिक्षा पद्धति है। यही कारण है कि इस समय शिक्षा में बदलाव की मांग उठ रही है। उत्तम शिक्षण की यही कसौटी है कि युवकों में अपना भावी जीवन विवेकपूर्वक चुनने की क्षमता उत्पन्न हो। भारत में पिछले सौ सालों में हरएक चिंतक-विचारक ने शिक्षा के प्रति असमाधान प्रकट किया है। इतना ही नहीं स्वतंत्रता के बाद हर राष्ट्रपति और हर प्रधानमंत्री ने तीव्र असमाधान प्रकट किया है। फिर भी शिक्षा का वही पुराना स्वरूप ज्यों-का-त्यों चला है। विनोबाजी तो मानते थे कि 15 अगस्त, 1947 को जैसे झंडा बदला वैसे ही शिक्षा भी तुरंत बदलनी चाहिए। इतिहास में गांधीजी से बड़े शिक्षक और शिक्षाशास्त्री का कोई उदाहरण नहीं मिलेगा। फिर भी अपने अंतिम दिनों में नयी तालीम के संदर्भ में चर्चा करते हुए उन्होंने दुख के साथ पूछा था, 'क्या शहरी लोग मेरी बात कुछ भी सुनेंगे ? अथवा मेरा कथन एक अरण्य-रोदन ही रहेगा ?

महात्मा गांधी ने जीवनभर शिक्षा के क्षेत्र में जितने प्रयोग किए, उतने किसी ने नहीं किए। उन्होंने स्वयं के द्वारा प्रवर्तित शिक्षा को 'नयी तालीम' नाम दिया। गांधीजी ने सन् 1937 में देश के सामने नयी तालीम की रूपरेखा प्रस्तुत की। गांधीजी का यह स्पष्ट विचार था कि किसी भी प्रकार का परिवर्तन लाने के लिए शिक्षा में परिवर्तन आवश्यक है। इसीलिए उन्होंने कहा था कि अहिंसक सामाजिक क्रांति के लिए 'नयी तालीम' एक अमोघ एवं अचूक शस्त्र है। उनकी इस शिक्षा योजना के पीछे स्वयं उनके जीवन के अनुभव हैं। अपनी शिक्षा में गांधीजी ने आत्मा के विकास का आधार सत्य, सामाजिक व्यवस्था का आधार अहिंसा और आर्थिक ढांचे का आधार अपरिग्रह माना। कर्मकेंद्रित शिक्षा व्यक्ति के सर्वांगीण विकास के साथ ही उसे एक समाजोपयागी प्राणी भी बनाती है।

शिक्षा प्राप्त करते समय ही गांधीजी ने वर्तमान शिक्षा प्रणाली की कमियों व इसकी निरर्थकता को गंभीरता से महसूस किया था। इसी समय से उनका यह निश्चित मत हो गया था कि शिक्षा यदि नैतिकता नही सिखाती तो वह शिक्षा ही नहीं है। इसके साथ ही विद्याभ्यास में व्यायाम अर्थात शारीरिक शिक्षा के समान ही स्थान होना चाहिए। स्कूली शिक्षा में धर्म की शिक्षा का अभाव उन्हें हमेशा ही खटकता रहा। लंदन में कानून का अध्ययन करते हुए गांधीजी ने यह अनुभव किया कि वास्तविक शिक्षण तो स्वाध्याय या स्व-शिक्षण से ही प्राप्त किया जा सकता है। जीवन में ऐसा कुछ भी नहीं है जो शिक्षा से संबंधित न हो। इसीलिए गांधीजी ने आहार-विज्ञान, प्राकृतिक चिकित्सा, स्वच्छता व स्वास्थ्य से संबंधित विषयों का गंभीरता से अध्ययन किया तथा खाना बनाना, कपड़ा धोना, प्रेस करना, सफाई व अन्य दूसरे गृह-कार्य इत्यादि को भी सीखा।

बैरिस्ट्री पढ़ाई पूरी करने के बाद गांधीजी ने यह स्पष्ट रूप से अनुभव किया कि वर्तमान शिक्षा का व्यवहार से कोई संबंध नहीं है और शिक्षा का संबंध काम से न हो तो यह शिक्षा बेकार है। इसलिए शिक्षा में व्यवहार के ज्ञान का तत्व अनिवार्य रूप से होना चाहिए। शिक्षा का उद्देश्य पैसा कमाना या कैरियर बनाना नहीं, बल्कि अच्छा बनना और देशसेवा करना है। फीनिक्स आश्रम में उन्होंने तीन घण्टे पढ़ाई, दो घण्टे खेती काम, दो घण्टे इण्डियन ओपीनियन समाचार पत्र में काम ऐसा कार्यक्रम चलाया। शिक्षा के साथ उत्पादक श्रम भी होना चाहिए। टॉलस्टॉय आश्रम की पाठशाला में गांधीजी ने शिक्षा में उद्योग को शामिल किया। यहां स्वावलंबन के नियम का कड़ाई से पालन होता था। पाखाना सफाई से लेकर खाना बनाने तक के सारे काम विद्यार्थी-शिक्षक मिलकर करते थे। भारत वापस आने पर गांधीजी शांति निकेतन में भी रहे। गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर ने गांधीजी की 'नयी तालीम' को देखकर कहा था 'इसमें स्वराज्य की चाबी मौजूद है।' पहले कोचरब तथा बाद में साबरमती आश्रम में गांधीजी ने विधिवत पाठशाला प्रारंभ की। जहां समस्त शिक्षण मातृभाषा में देना, विद्यार्थियों को स्वावलंबी बनाना, सभी विषयों का ज्ञान विशेष रूप से सफाई व आरोग्यशास्त्र की शिक्षा देना शामिल था। उन्होंने अनुभव किया कि शुद्ध शिक्षा के बिना राजनैतिक क्षेत्र में भी स्वराज्य की दिशा में किए गए सब प्रयत्न व्यर्थ होंगे। मातृभाषा के लिए उन्होंने यहां तक कहा कि जो मातृभाषा का अपमान करता है वह स्वदेश भक्त कहलाने लायक

नहीं है। उन्होंने शिक्षा को शासकीय शिकंजे से मुक्त करने का काम आरंभ किया।

असहयोग आंदोलन के दौरान गांधीजी ने मेकाले द्वारा स्थापित शिक्षा व्यवस्था की कटु शब्दों में आलोचना की। आज अध्ययन केवल परीक्षा देने के उद्देश्य से किया गया कठिन श्रम ही होता है और परीक्षा देने के बाद हम उसे यथासंभव जल्दी से जल्दी भूल जाने का प्रयत्न करते हैं। विदेशी भाषा में शिक्षा लेने के कारण हमारे घरवाले तथा आसपास के लोग उस ज्ञान से वंचित रह जाते हैं। गांधीजी ने ठीक ही अनुभव किया था कि शिक्षा मे नये प्रयोगों को करने में सबसे बड़ी बाधा है हमारा 'डिग्री' मोह। यदि डिग्री का मोह दूर किया जाय तो देश में गैर-सरकारी पाठशालाएं बहुत चल सकती हैं। आज भी स्कूल और कॉलेज सरकार के लिए क्लर्क और सरकारी कर्मचारी गढ़ने के कारखाने हैं।

अक्टूबर 1937 में गांधीजी ने 'नयी तालीम' के नाम से जिस 'उद्योग केंद्रित स्वावलंबी शिक्षा' का प्रारूप देश के सामने रखा उस संदर्भ में उनका कहना है कि शिक्षा का माध्यम ही किसी उद्योग को बनाना चाहिए और चुने हुए उद्योग के माध्यम से सभी विषयों की शिक्षा देनी चाहिए। शारीरिक श्रम द्वारा ही बच्चों का मानसिक विकास होना चाहिए और शारीरिक श्रम की शिक्षा महज इसलिए नहीं दी जायेगी कि बच्चे स्कूल के संग्रहालयों के लिए चीजें तैयार करें अथवा ऐसे खिलौने बनायें जिनकी कोई कीमत ही न हो। शारीरिक श्रम द्वारा ऐसी चीजों का उत्पादन होना चाहिए जो बाजार में बिक सकती हों। इस योजना में गांधीजी ने माना कि राज्य इन बच्चों की बनायी चीजें खरीद लेगा और इस तरह शिक्षा स्वावलंबी हो जायेगी।

सन् 1944 में गांधीजी जब जेल से बाहर आये तो नयी तालीम के लिए एक नयी दृष्टि एवं विचार लेकर आये। गांधीजी ने कहा कि नयी तालीम जीवनभर जारी रहनी चाहिए। नयी तालीम का क्षेत्र गर्भाधान से अंतिम संस्कार तक है। शिक्षा को दैनिक जीवन के प्रत्येक पहलू को छूना चाहिए।

नयी तालीम के संबंध में 14 दिसम्बर, 1947 को अपनी अंतिम चर्चा में गांधीजी ने कहा था, ''सामान्यत: यह माना जाता है कि बुनियादी शिक्षा उद्योग द्वारा शिक्षण देना है। यह एक हद तक सही है। परंतु यह पूरा सत्य नहीं है। नयी तालीम की जड़ें और गहरी जाती हैं। यह तो व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में सत्य-अहिंसा के आधार पर टिकी है। सच्चा शिक्षण वह है जो व्यक्ति को सच्ची स्वतंत्रता दिलाये।'

गांधीजी ने नयी तालीम की नींव पर जिस ग्रामस्वराज्य का चित्र खींचा वह कुछ इस प्रकार है, ''मैंने ऐसे दरिद्र भारत की कल्पना नहीं की, जिसमें करोड़ों अनपढ़ और बेसमझ लोग बसते हों। मैंने तो उस भारत की कल्पना की है, जो अपनी संस्कृति के अनुकूल पथ पर हमेशा आगे ही बढ़ता रहेगा। मैंने ऐसे भारत की भी कल्पना नहीं की जिसकी प्रगति मरती हुई पश्चिमी सभ्यता की एक घटिया या बहुत बढ़िया नकल हो। जो स्वप्न मैं देख रहा हूं, वह अगर कभी सच्चा निकल आया, अगर देश के सात लाख ग्रामों का हरएक ग्राम अपने आप में एक जीता जागता राष्ट्र बन गया, जिसमें कोई आलसी नहीं, कोई बेकार नहीं, जिसमें सब कोई उपयोगी कार्यो में लगे हैं, हरएक को पुष्टिकारक भोजन मिलता है, सब हवादार घरों में रहते हैं और उन्हें बदन ढंकने के लिए काफी खादी प्राप्त है और जिसमें सभी ग्रामवासी अपनी और अपने चारों ओर की सफाई क साधनों व सिद्धांतों का पूरा ज्ञान रखते हैं, तब हमारे राष्ट्र की जरूरतें उत्तरोत्तर बढ़ेंगी उन्हें हमें पूरा करना होगा।'' आज भी गांधी की पुकार एक चुनौती बनकर हमें ललकार रही है।

प्रसिद्ध विचारक श्री विश्वनाथ टण्डन ने 'नई तालीम का इतिहास : एक विहंगम दृष्टि' में नई तालीम के भविष्य पर विचार करते हुए लिखा है, ''अब सवाल यह है नई तालीम के भविष्य का। आज जो स्थिति है उससे लगता है कि गांधी शिक्षा-विचार कितना भी सही क्यों न हो, शालाओं में उसके अपनाए जाने की कोई संभावना दिखलायी नहीं देती है।

पिछले 30-35 वर्षो में शिक्षा की दुर्दशा के बावजूद, ऐसा नहीं लगता कि समाज के कर्णधारों, अध्यापकों, छात्रों और उनके संरक्षकों को शिक्षा में परिवर्तन के लिए कोई वास्तविक उत्साह है। वे आज भी पुराने मूल्यों को, उनकी और भी गिरी हालत में पकड़े बैठे हैं और स्वार्थ सिद्धि की होड़ में लगे हैं। उनको समाज की, जिसका बहुत बड़ा भाग विशेषाधिकार रहित, दुर्बल और गरीब है, कोई चिंता नहीं है। अत: नई तालीम का भविष्य अब केवल अनौपाचारिक अथवा प्रौढ़ शिक्षा में ही दीखता है। संभवत: उसकी सफलता के लिए अधिक आत्मपरीक्षण की भी जरूरत है, जिससे वह भली प्रकार समझा जा सके कि आज किस दिशा में जा रहे हैं और क्या सचमुच वह दिशा गांधी-विचार के क्रियान्वयन के लिए सही है। सफलता के लिए सभी का सहयोग चाहिए।

गांधी, विनोबा और राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ

- विश्वनाथ टंडन

16 सितम्बर, 1947 के दिन दिल्ली की भंगी कालोनी में 500 राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के कार्यकर्ताओं को संबोधित करते हुए गांधीजी ने बताया था कि कई वर्ष पूर्व संघ के संस्थापक डॉ.हेडगेवार के काल में वे वर्धा के एक संघ-शिविर को देखने गए थे। अनुमान है कि ऐसा उन्होंने डॉक्टर साहब के आमंत्रण पर ही किया होगा। डॉ.हेडगेवार कोलकत्ता से डॉक्टरी की शिक्षा लेने के बाद जब अपने घर नागपुर वापिस आये थे तो उन्होंने हिन्दू महासभा तथा कांग्रेस दोनों संस्थाओं की सदस्यता ग्रहण की थी। उनकी अपनी सोच का मेल हिन्दू महासभा के ध्येय से था जो हिन्दू हितों तथा अधिकारों की रक्षा चाहती थी और कांग्रेस से उसकी आशा नहीं रखती थी। 1920 में नागपुर में कांग्रेस के अधिवेशन के समय जिस कांग्रेस स्वयंसेवक दल का संगठन किया गया, उसके डॉक्टर साहब मुखिया थे। हिन्दू महासभा की संवैधानिक गतिविधियों की तुलना में गांधीजी के नेतृत्व में कांग्रेस की आजादी के लिए सीधी कार्रवाई उनको अधिक भाई थी, किंतु कांग्रेस द्वारा खिलाफत आंदोलन का समर्थन, चौराचौरी हत्याकांड के बाद गांधीजी का आंदोलन वापस ले लेना, कांग्रेसी नेताओं में मतभेद तथा केरल में मोपलाओं द्वारा हिन्दुओं पर भीषण अत्याचार से उनका मोहभंग हो गया था। साथ ही कांग्रेस स्वयंसेवक दल में उनको अनेक कमियां नजर आई थीं और उनको लगा था कि ऐसा कोई स्थायी दल होना चाहिए जिसमें अनुशासन के साथ सेवा भावना और वैचारिक बद्धता हो। इसी के फलस्वरूप उन्होंने 1925 को विजयादशमी के दिन राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की स्थापना नागपुर में की। जिसमें कुछ थोड़े चुने हुए लोग लिए गए थे। बाद में उन्होंने इन्हीं लोगों के द्वारा महाराष्ट्र के अन्य नगरों में और 1937 में तमिलनाडु तथा कर्नाटक में संघ को संगठित किया था।

इस सबके बावजूद डॉक्टर साहब ने 1930 में सविनय अवज्ञा आंदोलन में भाग लिया था, किंतु यह लगने पर कि कांग्रेस का नेतृत्व सक्षम नहीं है, उन्होंने सदैव के लिए उसको नमस्कार कर लिया था। फिर भी लगता है कि उनमें गांधीजी के प्रति आदर भाव था और इसी कारण उनको वर्धा में लगे शिविर में आमंत्रित किया था। गांधीजी स्वयंसेवकों के अनुशासन, उनमें छूआछूत की भावना का संपूर्ण अभाव तथा उनकी कठोर सादगी से प्रभावित हुए थे। उनका विश्वास था कि जिस संस्था में सेवा तथा आत्मत्याग की भावना है वह तरक्की करती जाती है, किंतु उससे देश का हित तभी सधता है जब उसका उद्देश्य पवित्र हो और उसको सही ज्ञान हो। अन्यथा, उससे देश को हानि ही पहुंचेगी। यद्यपि इसका उल्लेख नहीं मिलता है पर संभावना यही है कि उन्होंने डॉ. हेडगेवार को अपने विचारों से जरूरत अवगत करा दिया होगा।

भंगी कालोनी में राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ की सभा का प्रारंभ एक ऐसी प्रार्थना से हुआ था जिसमें भारत माता, हिन्दू धर्म तथा हिंदू संस्कृति का गुणगान था। अत: अपने भाषण में गांधीजी का कहना था कि हिन्दू धर्म बहिष्कारवादी नहीं है। उसने अन्य धर्मो की श्रेष्ठ बातों को अपने में आत्मसात किया है। अत: इस्लाम तथा उसके अनुयाइयों से उसका कोई झगड़ा नहीं हो सकता। जो लोग यह मानते हैं कि भारत में रह जाने वाले अन्य धर्मियों को हिन्दुओं का दास बनकर रहना है, वे हिन्दू धर्म की हत्या करने वाले सिद्ध होंगे।

उन्होंने उस अवसर पर बातचीत का जिक्र भी किया जो कुछ ही दिन पहले गुरु गोलवलकरजी से हुई थी जिन्होंने डॉ.हेडगेवार के निधन के बाद उनका स्थान ग्रहण किया था। गांधीजी ने जब उनके सामने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के खिलाफ शिकायतें रखीं जो उनको दिल्ली तथा अन्य स्थानों से मिली थीं, तो गोलवलकरजी का कहना था कि यद्यपि वे सभी स्वयंसेवकों के बारे में यह कहने की स्थिति में नहीं हैं कि उनका आचरण सही होगा, किंतु संघ की नीति यद्यपि केवल हिन्दुओं और हिन्दू धर्म की सेवा की है, वैसे ही किसी अन्य को हानि पहुंचाकर सेवा करने की नहीं है। संघ का विश्वास अहिंसा में तो नहीं है मगर आक्रामकता में भी नहीं है। स्वयंसेवकों को आत्मरक्षा का प्रशिक्षण तो दिया जाता है, बदला लेने का नहीं।

इस अवसर पर गांधीजी ने संघ के स्वयंसेवकों के सुसंगठित और अनुशासित होने की प्रशंसा की पर साथ में यह भी कहा कि वे अपनी शक्ति का प्रयोग देश के हित तथा अहित दोनों के लिए कर सकते हैं। उनके विरुद्ध तरह-तरह की शिकायतें उनको मिली हैं जिनकी सच्चाई के बारे में उनको पता नहीं है पर इतना अवश्य है कि वे अपने व्यवहार से उनको आधारहीन सिद्ध कर सकते हैं। इस प्रकार गांधीजी ने उनके गुणों को स्वीकार करते हुए उनको यह भी जता दिया था कि मुसलमानों के प्रति उनके रवैये से उनका मतभेद है। यहां पर इसका

उल्लेख भी उचित होगा कि 18 जनवरी 1948 के घोषणा पत्र पर जिसके द्वारा गांधीजी ने 13 तारीख को अनशन को समाप्त किया था, संघ के प्रतिनिधियों ने भी हस्ताक्षर किए थे। उसके द्वारा गांधीजी को यह विश्वास दिलाया गया था कि उन सबका प्रयास दिल्ली में शांति बनाये रखने का होगा।

गांधीजी की हत्या की खबर से पुणे तथा महाराष्ट्र के कुछ अन्य स्थानों पर खुशी मनाई गई थी और मिठाई बंटी थी। इससे यह संदेह पैदा हुआ था कि संघ के लोगों के हाथ भी उस हत्या में हैं। अत: संघ पर प्रतिबंध लगा दिया गया था और उसके सैकड़ों सदस्य जेलों में बंद कर दिए गए थे। बाद में उन पर उठी शंका निर्मूल सिद्ध हुई थी और 1949 में गोलवलकरजी द्वारा वल्लभभाई पटेल की शर्तों को मान लेने पर, वह प्रतिबंध समाप्त कर दिया गया था। वे शर्तें थीं कि संघ का अपना एक खुला संविधान होगा, उसकी गतिविधियां केवल सांस्कृतिक होंगी, भारत का संविधान तथा ध्वज उसको मान्य होगा, हिंसात्मक गुप्तता का उसमें कोई स्थान नहीं होगा तथा संघ का संविधान लोकतांत्रिक होगा। संघ के सदस्यों को किसी भी राजनीतिक दल में शामिल होने की छूट थी पर अपनी सोच के कारण उन्होंने जनसंघ को पसंद किया था जिसकी स्थापना डॉ.श्यामाप्रसाद मुखर्जी ने नेहरू-लियाकत समझौते के विरोध में नेहरू मंत्रिमंडल से इस्तीफा देने के बाद 1950 में की थी।

ऐसी स्थिति थी जब विनोबाजी का आगमन राष्ट्रीय परिदृश्य पर भूदान आंदोलन के जनक के रूप में 1950-51 में हुआ था और फिर उसके कारण उनकी ख्याति विश्व में भी फैल गई थी। वे एक महाराष्ट्रीय ब्राह्मण थे जिन्होंने अपने छात्रकाल में स्कूल के नियमों की उपेक्षा कर शिवाजी जयंती बाहर मनाई थी और अपने साथियों के साथ सहर्ष उसका दण्ड भुगता था। उनके जीवन पर महाराष्ट्र के संतों, विशेषकर संत ज्ञानेश्वर का प्रभाव था। बंगाल के क्रांतिकारी आंदोलन के प्रति उनमें सहानुभूति रही थी। लोकमान्य तिलक के वे भक्त थे तथ बीस के दशक के प्रारंभ में निकाली अपनी पत्रिका का नाम 'महाराष्ट्र धर्म' रखा था जो महाराष्ट्रीय भावनाओं का प्रतीक रहा है। अत: यह स्वाभाविक था कि संघ के सर्वोच्च महाराष्ट्रीय नेताओं में अपने प्रति अधिक सहानुभूति की अपेक्षा रही हो। किंतु विनोबाजी अपने उस काल से कहीं आगे बढ़ गए थे। उन्होंने कुरान का मूल अरबी में अध्ययन किया था जिससे पैगंबर के प्रति उनके मन में अत्यंत आदर था तथा गांधी-चिंतन से प्रभावित होकर उन्होंने अपना एक स्वतंत्र जैसा सामाजिक चिंतन विकसित कर लिया था और संघ की दृष्टि से उनकी दृष्टि का मेल नहीं था।

इसका संकेत हमें उनके उस भाषण से मिलता है जो उन्होंने वर्धा में दिसम्बर 1941 में दिया था। उसका विषय 'तीन प्रमुख वादों की समीक्षा' था। ये प्रमुख वाद थे - फासिज्म या नाजिज्म, साम्यवाद तथा गांधीवाद'। उसमें उनका कहना था कि हर वाद में गुण तथा अवगुण होते हैं। अगर हम किसी वाद के अवगुणों के कारण उसको पूर्णतया अस्वीकार करें तो उससे वह वाद शक्तिशाली ही बनता है तथा फलता-फूलता है। नाजीवाद में भी गुण हैं और वे हैं देश के पुराने इतिहास के प्रति गर्व, पूर्वजों की परंपराओं के प्रति आकर्षण तथा पुरानी परंपराओं को बनाये रखने पर बल। साथ ही, उसमें अवगुण हैं नस्ल का मिथ्याभिमान तथा नवयुवकों के विचारों को एक सांचे में ढालने का प्रयास। उनका कहना था कि इस तरह का वाद भारत में फैल रहा है, हिंदुओं में भी और मुसलमानों में भी अपने महाराष्ट्र की उपमा लेकर उन्होंने व्याख्यान में कहा था कि यहां के युवकों को 'महाराष्ट्र धर्म' 'अपने पेशवा का राज' तथा 'अपना समर्थ' जेसे नारे प्रेरणा देते हैं तथा 'दास नवमी' हनुमान जयंती 'शिवाजी उत्सव' जैसे पर्व उनको आकर्षित करते हैं। विनोबाजी को जहां यह सब ठीक लगता था, महाराष्ट्रियों में पाई जाने वाली संकीर्णता उनको अखरती थी इसका एक उदाहरण गांधीजी के प्रति इन लोगों की दृष्टि थी जो यह मानती थी कि गांधीजी देश को दे ही क्या सकते हैं? वे एक गुजराती हैं जिनकी रुचि व्यापार में है और जिनकी परंपरा युद्ध की नहीं रही है। विनोबाजी ने एक महाराष्ट्रीयन होने के नाते ही इस सोच को गलत बताया था।

उनका इस पर भी बल था कि हिन्दू संस्कृति कभी अलगाववादी नहीं रही है। इसके पक्ष में उन्होंने रवींद्रनाथ ठाकुर के गीत 'हे मोर चित्त' का उल्लेख किया जिसमें 'ऐ ही भारतेर महामानवेर सागरतीरे' की पंक्ति बार-बार आती है। इसको समझाते हुए विनोबाजी का कहना था, ''सारी दुनिया के लोग यहां आकर बसे हैं। सभी आक्रमण करके जबरदस्ती से नहीं बैठे। हमने समझ-बूझकर उन्हें जगह दी। हमारे राष्ट्र की यह मर्यादा है, एक पुरानी परंपरा है कि हम दूसरों को अवसर दे सकते हैं पर दूसरों पर आक्रमण नहीं करते।'' आगे वे यह भी कहते हैं कि, ''हिंदुस्तान की परंपरा एक महान वटवृक्ष की परंपरा है। उस वटवृक्ष का आश्रय लेने के बजाय उसकी शाखाएं काटकर सिर फोड़ लेना उदात्त अभिमान का लक्षण नहीं हैं हिंदुस्तान की मुख्य परंपरा हिन्दू, मुसलमान, पारसी, सिख आदि सभी धर्मो के साथ बंगाली, महाराष्ट्रीय, गुजराती आदि सभी क्षेत्रों के श्रेष्ठ शास्त्रकारों और असंख्य साधु और संतों की परंपरा है। अगर मैं इस परंपरा को छोडूंगा तो अपने राष्ट्र का तेजोवध करूंगा।''

क्रमश:

प्रेरक कहानियाँ

धन का परिणाम हिंसा

दो सगे भाई थे, ब्राह्मण थे और दरिद्र थे। बहुत कम पढ़े-लिखे थे। कंगाली से उबकर दोनों साथ ही घर से निकले और समुद्र किनारे की एक बस्ती में पहुंचे। वहां मछुआरों के घर ही अधिक थे। बड़ी उंची पगड़ी, भव्य तिलक और पोथियों की बड़ी-बड़ी गठरी थी दोनों भाइयों के पास। दोनों ने अपने को ज्योतिष प्रसिद्ध कर रखा था। मंत्र-तंत्र, झाड-फूंक सभी करते थे। दोनों ने उन अनपढ़ सीधे-सादे, श्रद्धालु मछुआरों को भरपूर ठगा। कुछ दिनों में ही उनके पास पर्याप्त धन हो गया। दोनों जब घर लौटने लगे, तब उनके पास उनके कमाये धन के रूप में सोने की मोहरों से भरी थैली थी।

बड़ी विचित्र दशा थी। मोहरों की थैली को बारी-बारी से वे अपने पास रखते थे। परंतु जिसके पास थैली रहती थी, उसी के मन में विचार आता था मैं यदि अपने भाई को मार डालूं तो पूरा धन मेरा हो जाए। दोनों सगे भाई थे, दोनों में प्रगाढ़ प्रेम था। इसलिए दोनों में किसी ने भी अपने पापपूर्ण विचार को कार्यरूप नहीं दिया। उल्टे घर के समीप पहुंचकर जिसके पास थैली नहीं थी, उसने दूसरे से कहा - भैया क्षमा करना! जब-जब यह थैली मेरे पास आई तब-तब मेरे मन में तुम्हें मार देने की इच्छा हुई। इसलिए यह धन तुम्हीं रखो।' दूसरे भाई ने कहा - 'मेरी भी यही दशा है। थैली मेरे पास है, इसलिए इस समय भी मेरे मन में यही विचार उठ रहे थे। हम दोनों ही भ्रातृत्व का नाश करने वाले इस धन का त्याग कर दें। यही उत्तम होगा।

घर के समीप ही एक गड्ढा था, जिसमें घर का कूड़ा-कचरा डाला जाता था। दोनों ने वह थैली उसमें फेंक दी। यह भी चिंता नहीं की कि उसे ढक दिया जाए। वे उसे फेंककर घर में चले गए। परंतु उनकी बहन थोड़ी देर में ही फल तथा शाक के छिलके उस गड्ढे में डालने आई। थैली लुढ़की पड़ी थी। मोहरें कुछ बाहर पड़ी दीख रही थीं। उस नारी ने उस धन को उठाकर वस्त्र में छिपाना आरंभ किया, जिससे रात्रि में अपने पति के पास उसे भेज सके। 'आप कूड़े के गड्ढे में क्या कर रही हैं? दोनों भाइयों में से एक की स्त्री किसी काम से घर से बाहर निकली और अपनी ननद को कूड़े में कुछ करते देख उसके पास पहुंचकर पूछने लगी। ननद ने समझा कि भाभी ने मोहरें देख ली हैं। हाथ में फल काटने की छुरी थी ही, उसने उसे भाभी के पेट में भोंक दिया। छुरी लगने से स्त्री घायल होकर चीख पड़ी। उस चीख को सुनकर उसका पति दौड़ा आया। बहन घबराकर भागने लगी तो उसकी बगल में दबी थैली नीचे गिर पड़ी। अब बहन को कुछ और नहीं सूझा, उसने वह छुरी पने पेट में भी मार ली! भैया! पाप से कमाये इस धन को फेंक देने पर भी इतना अनर्थ किया। दूसरा भाई भी दौड़कर आया। जो पहले आया था, वह सिर पकड़कर वहीं बैठ गया।

भगवान की थाती

एक बार नारदजी जब बैकुण्ठ आये, तो उन्होंने देखा कि महाविष्णु चित्र बनाने में मग्न हैं और आसपास शिव, ब्रह्मा इत्यादि अगणित देवता विष्णु की कृपाकटाक्ष पाने के लिए लालायित खड़े हैं। किंतु विष्णु को उनकी ओर देखने का अवकाश भी नहीं। चित्रलीन विष्णु ने नारदजी को भी नहीं देखा। विष्णु का यह व्यवहार नारद को बड़ा अपमानजनक प्रतीत हुआ। वे आवेश में विष्णु के समीप गये और पास ही खड़ी लक्ष्मी जी से उन्होंने पूछा, ''आज इतनी तन्मयता के साथ भगवान किसका चित्र बना रहे हैं ?'' लक्ष्मी ने अपने स्वाभाविक भृकुटि चांचल्य के साथ कहा, ''अपने सबसे बड़े भक्त का - आपसे भी बड़े भक्त का!'' दोहरे अपमानित नारदजी ने पास जाकर देखा, तो आष्चर्य से स्तब्ध हो गये - अचल ध्यानावस्थित विष्णु एक मैले-कुचैले अर्धनग्न मनुष्य का चित्र बना रहे थे। नारदजी का चेहरा क्रोध से तमतमा गया। वे उल्टे पांव भूलोक की ओर चल पड़े। कई दिनों के भ्रमण के बाद उन्हें एक अत्यंत घिनौनी जगह पर पशु-चर्मो से घिरा एक चर्मकार दिखाई दिया, जो गंदगी और पसीने से लथपथ चमड़ों के ढेर को साफ कर रहा था। पहली दृष्टि में ही नारदजी ने पहचान लिया कि विष्णु इसी का चित्र बना रहे थे। दुर्गंध के कारण नारदजी उसके पास न जा सके। अदृश्य होकर वे दूर से ही उसकी दिनचर्या का निरीक्षण करने लगे।

संध्या होने को आयी, किंतु वह चर्मकार न तो मंदिर में गया और न आंख मूंदकर उसने क्षण भर के लिए हरिस्मरण ही किया। नारदजी के क्रोध की सीमा न रही। एक अधमाधम चर्मकार को श्रेष्ठ बताकर विष्णु ने उनका कितना घोर अपमान किया है! अंधेरा बढ़ने के साथ-साथ उनके मन की अस्थिरता भी गहरी होने लगी। आवेषान्ध हो विष्णु का शाप देने के लिए उन्होंने अपनी तेजस्वी बाहु उपर उठायी थी कि लक्ष्मी ने प्रकट होकर उनका हाथ पकड़ लिया ओर कहा, 'देव! भक्त की उपासना का उपसंहार तो देख लीजिए, फिर जो करना हो, कीजिए।' उस चर्मकार ने चमड़ों के ढेर को समेटा। सबको एक गठरी में बांधा। फिर एक मैले कपड़े से सिर से पैर तक शरीर को पोंछा और गठरी के सामने झुककर विनय-विह्वल वाणी में कहने लगा, ''प्रभो! दया करना। कल भी मुझे ऐसी ही सुमति देना कि आज की तरह पसीना बहाकर तेरी दी हुई इस चाकरी में सारा दिन गुजार दूं।'' और नारदजी को विश्वास हो गया कि वह चर्मकार विष्णु को क्यों सर्वाधिक प्रिय है।

रजि. MPHIN/2003/11246 Postal Reg. ICD. (MP) 1106/2012-14

गोविभा 20 नवम्बर, 2012

जमनालाल बजाज पुरस्कारों की घोषणा

मुम्बई (सप्रेस)। वर्ष 2012 के प्रतिष्ठित जमनालाल बजाज पुरस्कारों की घोषणा कर दी गई है। इस वर्ष बजाज पुरस्कार हेतु रचनात्मक कार्य के क्षेत्र में प्रशंसनीय योगदान के लिए गोपुरी आश्रम, (महाराष्ट्र) के जयवंत मठकर, ग्राम विकास हेतु विज्ञान और तकनीकी के व्यावहारिक उपयोग के लिए पैन वर्धा हिमालयन ग्रासरूट डेवलपमेंट फाउण्डेशन, उत्तराखंड के श्री कल्याण पॉल को दिया गया है। महिला व बाल कल्याण के क्षेत्र में प्रशंसनीय योगदान के लिए श्रीमती जानकीदेवी बजाज की स्मृति में स्थापित पुरस्कार जम्मू-कश्मीर में हैल्प फाउण्डेशन की श्रीमती विगत शफी एवं विदेशों में गांधीवादी मूल्यों के प्रसार के लिए अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार अमेरिका के सेंटर फॉर ग्लोबल नॉनकिलिंग के प्रो. ग्लेन पेज को दिया गया है। ज्ञातव्य है कि जमनालाल बजाज न्यास मंडल के अध्यक्ष राहुल बजाज एवं फाउण्डेशन की परामर्शदाता परिषद् के अध्यक्ष न्यायमूर्ति चंद्रशेखर धर्माधिकारी है।

शिक्षक सप्ताह में एक दिन खादी पहनेंगे

बीजापुर। यहां की शिक्षण संस्था में कार्यरत शैक्षणिक और गैर शैक्षणिक स्टाफ ने सप्ताह में एक दिन खादी पहनने का संकल्प लिया है। गांधी जंयती के समारोह में बीईएसडब्ल्यू शांतिनिकेतन शिक्षण समूह के 75 सदस्यों ने यह संकल्प लिया। सोसायटी के अध्यक्ष डॉ.सुरेश बिरादर ने कहा कि खादी भारतीय स्वाधीनता संग्राम का प्रतीकात्मक वस्त्र है। खादी धारण करने का यह नया सिस्टम अगले माह से समूह की पांचों संस्थाओं में लागू हो जाएगा। हमारे दो प्राथमिक स्कूल हैं, एक हाई स्कूल है, एक साइंस कॉलेज है और एक डी.एड कॉलेज है। प्रति सप्ताह बुधवार को सभी स्टाफ मेम्बर्स खादी पहनेंगे। डॉ.शीला बिरादर ने कहा कि इसमें पालकों की सहमति भी ली जाएगी।

सम्पत्ति का बंटवारा

– जे.सी.कुमारप्पा

हिंदुस्तान में चोटी के कुछ आदमियों पर कुबेर का खजाना है और बाकी सारा राष्ट्र दरिद्रता की चक्की में पिस रहा है, यह बात सबको अच्छी तरह मालूम है। यदि हमारे उद्योग-धंधों की व्यवस्था, पूंजी के ही आधार पर होती रही तो इससे नौकरी देने का अधिकार कुछ गिने चुने हुए लोगों के हाथ में चला जाएगा। केंद्रित व्यवसाय, इसलिए एक ऐसे देष में जहां पहले से ही बेहद बेकारी फेली हुई है और जहां एक बड़े पैमाने पर लोगों को पूरा काम नहीं किलता, एक ऐसी जटिल स्थिति पैदा कर देता है जिसका कोई हल नहीं है। एक ऐसे देश में जहां श्रमिकों की बहुतायत है एक ऐसे संगठन या संघ की जरूरत है जो धन के इस साधन का सर्वोत्तम उपयोग करे। गृह उद्योग या ग्रामोद्योग धन का बंटवारा करते हैं, जबकि केंद्रित उद्योग धन को एक जगह संचित करते हैं। इसलिए हमें पहली चीज को ही लेना चाहिए, दूसरी चीज को नहीं।

स्वास्थ्य समाचार

सर्वोदय सेवक और गोविभा के संपादक श्री नरेंद्र दुबे स्वास्थ्य लाभ के बाद बैंगलोर से इन्दौर आ गए हैं। आगे समाचार यह है कि वे लकड़ी की सहायता से अपने–आप उठ जाते हैं। नित्य नैमित्तिक कर्म के लिए अवलंब कम हुआ है। समाचार–पत्रों को देखना प्रारंभ किया है। सर्वोदय क्षेत्र और खादी क्षेत्र में चलने वाली गतिविधियों की जानकारी रुचि से ग्रहण करते हैं। दूरदर्शन पर आने वाले धारावाहिकों और समाचारों को देखकर प्रतिक्रिया देते हैं। वाणी आना अभी शेष है।

प्रकाशक :
नरेन्द्र दुबे, कार्याध्यक्ष, गोविज्ञान भारती
द्वारा मुंबई सर्वोदय मण्डल, 299, ताड़देव रोड, नानाचौक
मुंबई-400 007, फोन : (022) 23872061

डी-37, सुदामा नगर, इन्दौर-452 009
फोन : 0731-2489475, मो.: 97542 20781
www.govigyan.org ● e-mail : vinobaji1@gmail.com
prof.pushpendra@gmail.com

मुद्रण : श्रीकृति ग्राफिक्स, बी-133, सुदामानगर, इन्दौर
मो.: 98269 51703

वार्षिक शुल्क : रु. 50 एक प्रति : रु. 5

गोविभा

रजि. MPHIN/2003/11246
पोस्टल रजि.आई.सी.डी. (एम.पी.) 1106/12-14

सेवा में,